कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन

(1980-2014)

मेरे शोध का शीर्षक ‘कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन (1980-2014)’ है। इस शोधकार्य के लिए 1980 से 2014 अर्थात लगभग 34 वर्षों की समयावधि के अंदर प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का आधार ग्रन्थ के रूप में चयन किया गया है।

प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण कश्मीर राजनैतिक दृष्टि से हमेशा विवाद का विषय रहा है। कश्मीर को लेकर हुए राजनैतिक निर्णय, हिंसा और आतंकवाद ने केवल एक भौगोलिक क्षेत्र को नहीं बल्कि वहाँ के निवासियों को भी प्रभावित किया है। कश्मीर केवल एक भूमि का टुकड़ा नहीं है बल्कि वहाँ जनजीवन भी है और इस सबका प्रभाव कश्मीरी-जीवन पर भी पड़ा है। कश्मीर-जनजीवन की इसी त्रासदी की अभिव्यक्ति हिंदी उपन्यासों में हुई है। सन् 1980 के बाद से कश्मीर पर उपन्यास लिखने की जो परंपरा दिखाई देती है वह 21वीं सदी तक बरकरार है। प्रस्तुत शोध के अंतर्गत चयनित उपन्यासों में यह अनुसंधान करने का प्रयत्न किया गया है कि एक आम कश्मीरी के जीवन की जटिलताओं को, कश्मीर से विस्थापित कश्मीरियों और वहाँ रहनेवाले कश्मीरियों की स्थिति को किस रूप में चित्रित किया गया है एवं उपन्यासों में प्रस्तुत राजनैतिक एवं ऐतिहासिक घटनाएं कितनी ‘तथ्यात्मक’ हैं इसका भी विश्लेषण किया गया है।

इस शोधकार्य के मुख्य शोध प्रश्न इस प्रकार हैं-

1) कश्मीर और कश्मीरी-जीवन की समस्यायों को समझना।
2) तथाकथित ‘कश्मीर विवाद’ को साहित्यिक सन्दर्भ में देखने-समझने की कोशिश करना।
3) कश्मीर के धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक परिप्रेक्ष्य को समझना।
4) उपन्यासों में कश्मीरियों यानी कश्मीरी पंडितों और कश्मीरी मुसलमानों की पीड़ा को समान रूप से स्थान दिया गया है या नहीं इस पर अनुसंधान करना।

5) कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों के शिल्प विधान का विश्लेषण करना।

6) उपन्यासों में चित्रित कश्मीर से जुड़े सभी प्रश्नों जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक मुद्दों का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करना।

इस शोधकार्य को छः अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय 'कश्मीर: एक ऐतिहासिक यात्रा' कश्मीर संबंधी मिथकीय कथाओं, प्राचीन इतिहास ग्रंथों, साहित्य एवं संस्कृति पर आधारित है। इस अध्याय को दो उपअध्यायों में बांटा गया है-

i)कश्मीर: सांस्कृतिक विरासत

ii)कश्मीर: राजनैतिक इतिहास (1947-1980)

पहले उपअध्याय 'कश्मीर: सांस्कृतिक विरासत' में कश्मीर के मिथक, इतिहास, कश्मीरी रचनाकारों और कश्मीर की 'साझी संस्कृति' को शामिल किया गया है। कश्मीर एक ऐसा प्रदेश है जिसके उदय की कथा हिन्दू, इस्लाम और बौद्ध धर्म में अलग-अलग मिलती है। इस उपअध्याय में कश्मीर की उत्पत्ति संबंधी इन तीनों धर्मों की कथाओं को भी शामिल किया गया है। कश्मीर में आरंभ से ही इतिहास लेखन की परंपरा मिलती है। कल्हण ने 1148 ई. से 1150 ई. के बीच 'राजतरंगिणी' की रचना की थी जिसमें उन्होंने महाभारतकालीन राजा गोनंद से लेकर अपने समकालीन राजा जयसिंह के शासनकाल काल (लगभग 1128 ई.) का वर्णन किया है। कल्हण के बाद जोनराज ने अपनी 'द्वितीय राजतरंगिणी' में राजा जयसिंह के शासनकाल के बाद से लेकर समकालीन शासक जैन-उल-आब्दीन के समय तक के इतिहास को प्रस्तुत किया है और उनकी मृत्यु के बाद उनके शिष्य पंडित श्रीवर ने फतह शाह (1486) के शासन में आने तक की घटनाओं को शामिल किया। साथ ही इस उपअध्याय में कश्मीरी रचनाकारों के रूप में हब्बा खातून, अरणिमाल, रूपभवानी आदि की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस उपअध्याय में उन्हीं रचनाकारों की रचनाओं का विश्लेषण किया गया है जिनकी रचनाओं का हिंदी अनुवाद उपलब्ध है।

कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों में एक शब्द बार-बार आता है वह है ‘साझी संस्कृति’। यानी वह संस्कृति जहाँ दो धर्मों के लोग एक साथ रहते हैं और इस ‘साझी विरासत’ के पुरोधा के रूप में दो प्रतिनिधि सामने आते हैं- एक भक्त कवयित्री ललद्यद और दूसरे मुसलमान ऋषि शेख नुरुद्दीन। इन दोनों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से एक ऐसे समाज की कल्पना प्रस्तुत की थी जहाँ सभी एक-दूसरे के धर्म का सम्मान करे और मिलजुल कर रहें। इस उपअध्याय में उनकी रचनाओं (वाख और श्रुख) के आधार पर कश्मीर की उस ‘साझी विरासत’ को दिखाया गया है जिसकी उम्मीद कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों में मिलती है।

दूसरे उपअध्याय ‘कश्मीर: राजनैतिक इतिहास (1947-1980)’ में देसी रियासत के रूप में कश्मीर की अवस्थति पर विचार किया गया है। 15 अगस्त सन् 1947 से पूर्व कश्मीर को देसी रियासत का दर्जा प्राप्त था। देसी रियासतें वे रियासतें थी जिनपर प्रत्यक्ष रूप से शासन तो महाराजा अथवा नवाबों का ही होता था लेकिन इन रियासतों के शासक स्वतंत्र शासक होने के बावजूद भी ब्रिटिश शासन के ही अधीन थे। इनकी स्वायत्तता केवल उतनी थी जितनी ब्रिटिश हुकूमत उन्हें देना चाहती थी। भारत की आज़ादी और विभाजन के पश्चात जब देसी रियासतों को भारत या पाकिस्तान में विलय का विकल्प दिया गया तब कश्मीर के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह ने कश्मीर को स्वतंत्र रखने का निर्णय लिया और भारत एवं पाकिस्तान दोनों ही देशों से ‘स्टैंडस्टील समझौता’ बनाये रखना चाहा और यही से उस ‘कश्मीर समस्या’ की शुरुआत हुई जिसकी पृष्ठभूमि बहुत पहले से बन रही थी। अक्तूबर 1947 में पाकिस्तान ने ‘स्टैंडस्टील समझौते’ का उल्लंघन किया फिर क़बायली हमला हुआ जिसे रोकने में महाराजा हरिसिंह असमर्थ थे। उन्होंने भारत से मदद मांगी और उसी दौरान कश्मीर का भारत में विलय हुआ लेकिन यह विलय भी विवाद का मुद्दा बना। उसके बाद भारतीय संविधान में कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा दिया गया जिसका विरोध भी हुआ। इसके बाद भारत सरकार और कश्मीर के बीच कश्मीर को लेकर ‘दिल्ली समझौता’ एवं ‘शिमला समझौता’ हुआ। कश्मीर मुद्दे पर भारत पाकिस्तान के बीच युद्ध भी हुआ और इन सबके परिणामस्वरूप कश्मीर की राजनैतिक स्थिति बहुत उथल-पुथल

भरी रही और कश्मीर में आतंकवादी घटनाएँ भी बढ़ने लगी जिसका प्रभाव कश्मीरियों के जीवन पर भी पड़ा। इस उपअध्याय में 1947 से 1980 तक की महत्वपूर्ण राजनैतिक घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय 'हिंदी कथा साहित्य में कश्मीर' को तीन उपअध्यायों में बांटा गया है-

i) सन् 1980 के पूर्व प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यास

ii)सन् 1980 से 2014 तक प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यास

iii)कश्मीर केन्द्रित हिंदी कहानियाँ

पहले उपअध्याय 'सन् 1980 के पूर्व प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यास' में यह खोजने का प्रयास किया गया है कि कश्मीर को आधार बनाकर उपन्यास लिखने की शुरुआत कब हुई थी। चूँकि इस शोधकार्य में 1980 के बाद प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों को शोध का आधार बनाया गया है अत: यह जानना आवश्यक है कि 1980 के पूर्व के हिंदी उपन्यासों में कश्मीर को किस रूप में चित्रित किया गया है। इस क्रम में प्राप्त सूचना के आधार पर सन् 1907 में प्रकाशित जयराम गुप्त का उपन्यास 'काश्मीर पतन' मिलता है जो कश्मीर के राजा रणजीत सिंह को केंद्र बनाकर लिखा गया है। इसके पश्चात सन् 1957 में प्रकाशित उपेन्द्रनाथ अश्क का उपन्यास 'पत्थर अलपत्थर' है जिसकी कथा कश्मीर के एक घोड़ावान हसनदिन को केंद्र में रखकर लिखी गई है। इसी क्रम में मोहन राकेश का अधूरा उपन्यास 'काँपता हुआ दरिया' (नई कहानियों में मार्च, 1964 से मार्च, 1965 तक 11 किस्तों में प्रकाशित) भी है जिसमें कश्मीर के एक गरीब हाजी परिवार कहानी है। मोहन राकेश के इस अधूरे उपन्यास को मीरा कांत ने पूरा किया जिसका प्रकाशन सन् 2020 में हुआ है। सन् 1969 में प्रकाशित क्षेमलता वखलू का उपन्यास 'काश्मीर की धरती' में रहमान को आधार बनाकर राजनीति में होते भ्रष्टाचार को दिखाया गया है वहीं सन् 1974 में प्रकाशित मनमोहन सहगल का उपन्यास 'कश्मीर की कसक' में 1965 में हुए भारत-पाकिस्तान युद्ध और उसका कश्मीरी जनमानस पर पड़ते प्रभाव को दिखाया गया है।

दूसरे उपअध्याय 'सन् 1980 से 2014 तक प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यास' में शोध के लिए चयनित उपन्यासों का विश्लेषणात्मक परिचय दिया गया है। उपन्यासों के नाम निम्नवत हैं-

1. ऐलान गली जिंदा है (1984)- चंद्रकांता
2. नरमेध (1986)- मनमोहन सहगल
3. पाषाण युग (1988)- संजना कौल
4. यहाँ वितस्ता बहती है (1992)- चंद्रकांता`
5. नौशीन (1995)- पद्मा सचदेव
6. घटता-बढ़ता चाँद (1998)- मनमोहन सहगल
7. कथा सतीसर (2001)- चंद्रकांता
8. कश्मीर के बेटी (2002)- शत्रुघ्न प्रसाद
9. दर्दपुर (2004)- क्षमा कौल
10. व्यथ-व्यथा (2005) हरिकृष्ण कौल
11. एक कोई था कहीं नहीं-सा (2009)- मीरा कांत
12. शिगाफ़'(2010)- मनीषा कुलश्रेष्ठ
13. सूखते चिनार (2012)- मधु कांकरिया
14. इकबाल (2014)- जयश्री राय

तीसरे उपअध्याय 'कश्मीर केन्द्रित हिंदी कहानियाँ' में चंद्रकांता के कहानी संग्रह 'काली बर्फ', 'कथानगर', 'अब्बू ने कहा था', 'चंद्रकांता: चुनी हुई कहानियाँ', मीरा कांत की कहानियाँ 'काली बर्फ', 'स्मृति पिंड', संजना कौल का कहानी संग्रह 'काठ की मछलियाँ' और मधु कांकरिया की कहानी 'युद्ध और बुद्ध' का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

तृतीय अध्याय 'हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त कश्मीरी स्वर' को 7 उपअध्यायों में बांटा गया है-

i)**कश्मीर की साझी संस्कृति-** कश्मीर केन्द्रित लगभग सभी उपन्यासों में 'साझी संस्कृति' अर्थात कश्मीरियों की एक साथ मिलकर रहनेवाली संस्कृति की चर्चा हुई है। 'कथा सतीसर' उपन्यास में 'लल्ली-खुर्शीद', 'एक कोई था कहीं नहीं-सा' उपन्यास में 'साजिद-अम्बरनाथ' एवं 'पाषाण युग' उपन्यास में 'अंजलि-नसीम' के संबंधों को आधार बनाकर कश्मीर की संस्कृति को उसी 'साझी विरासत' से जोड़ा गया है जो ललद्यद और शेख नुरुद्दीन की है। ख़राब होते माहौल में भी बचे-बने इन संबंधों को आधार बनाकर उपन्यासों में यह दिखाया गया है कि कश्मीर की संस्कृति भय, हिंसा और घृणा की नहीं हैं सद्भावना की है, एक-दूसरे के धर्म का सम्मान करने की है और इसी मार्ग पर चलकर आतंक और हिंसा से कश्मीर को बचाया जा सकता है। इस उपअध्याय में कश्मीर की इसी 'साझी संस्कृति' का विश्लेषण किया गया है।

ii)**क़बायली हमला-** भारत की आज़ादी और विभाजन के बाद कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने कश्मीर को स्वतंत्र रखने का निर्णय लिया था लेकिन अक्तूबर 1947 में कश्मीर पर क़बायली हमला हो गया। क़बायलियों ने कश्मीर पर कब्ज़ा करने और कश्मीर को डोगरा शासक हरिसिंह के शासन से मुक्त करवाने के उद्देश्य से हमला किया था लेकिन असल में वे कश्मीर में घुसकर कश्मीरियों को लुट रहे थे, गैर मुसलमानों की हत्या कर रहे थे, औरतों का शारीरिक शोषण कर रहे थे। इस उपअध्याय में 'कथा सतीसर', 'नरमेध' एवं 'दर्दपुर' उपन्यासों के माध्यम से इस हमले के दौरान क़बायलियों की बर्बरता, कश्मीरियों विशेषकर गैर मुसलमानों की स्थिति, उनके भय एवं अंतर्द्वंद और कश्मीरी मुसलमानों की भूमिका का विश्लेषण किया गया है।

iii) **कश्मीर: अस्मिता का संकट-** कश्मीर के सन्दर्भ में अस्मिता का संकट उन सभी कश्मीरियों पर है जो कहीं-न-कहीं अपनी पहचान को लेकर संघर्षरत हैं- कभी अपनी पहचान पाने के लिए तो कभी अपनी पहचान पर होनेवाले संदेह से स्वयं को मुक्त करने के लिए।

'कथा सतीसर' उपन्यास की लल्ली और 'एक कोई था कहीं नहीं-सा' उपन्यास की शबरी विस्थापन

के बाद सारी सुख-सुविधा होने और अपने परिवार के बीच रहते हुए भी खुश नहीं है क्योंकि उनके पास उनकी पहचान नहीं है, वह पहचान जो उनके प्रदेश से, उनके अपने घर से जुड़ी है। उन्हें हमेशा लगता है जैसे वह विस्थापित हैं। स्वयं की यह पहचान उन्हें आहत करती है। वहीं ‘शिगाफ़’ उपन्यास की अमिता को लगता है कि वह कश्मीर जहाँ उसका बचपन गुजरा है, जहाँ कभी उसका घर हुआ करता था वहाँ उसकी पहचान बस एक ‘टूरिस्ट’ की है और वह चाहकर भी इसे बदल नहीं पाती है। अस्मिता अथवा पहचान के इस संकट से केवल कश्मीर छोड़कर गए कश्मीरी पंडित ही नहीं जूझ रहे थे बल्कि ‘नौशीन’ उपन्यास का इकबाल, ‘पाषाण युग’ उपन्यास का इरफ़ान और ‘शिगाफ़’ उपन्यास का मुजीब हसनैन जैसे कश्मीरी मुसलमान भी अपनी पहचान पर प्रश्नचिन्ह लगता महसूस कर रहे थे क्योंकि उन्हें उनके ही दोस्तों एवं पड़ोसियों द्वारा संदेह की निगाह से देखा जाने लगा था।

‘शिगाफ़’ उपन्यास में ‘भाषाई पहचान’ के संकट को भी उठाया है क्योंकि भाषाई पहचान का संकट जातीय पहचान से जुड़ा है और जातीय पहचान का संकट अपनी भूमि की पहचान से जुड़ा है। विस्थापन के बाद कश्मीरी पंडितों के सामने अपनी भाषा को आगे आनेवाली पीढ़ियों के लिए बचाए रखने का भी संकट था। वर्षों से स्पेन में रहनेवाली अमिता स्पेनिश बोलते हुए हमेशा कश्मीर को याद करती है। वह अपनी भाषा को अपने प्रदेश में बोलना चाहती है क्योंकि उसे लगता है कि वह गैरभाषियों के बीच वह अपनी भाषा भूलती जा रही है। इस उपअध्याय में कश्मीरियों के सामने उपस्थित अस्मिता के इस संकट को विश्लेष्णात्मक ढंग समझने का प्रयास किया गया है।

iv) हिंसा की राजनीति और कश्मीर- इस उपअध्याय में सेना और दहशतगर्दों के बीच रहते एक आम कश्मीरी के जीवन की जटिलताओं का विश्लेषण किया गया है। मधु कांकरिया ने अपने उपन्यास ‘सूखते चिनार’ में सेना और आम कश्मीरियों के आपसी संबंधों, उन संबंधों में आने वाले तनाव और होते मतभेदोन के कारणों को चित्रित किया है।

चंद्रकांता ने लिखा है, “कल्हण पंडित ने जिस कश्मीर को कभी ‘धरती का स्वर्ग’ कहा था, वह आज

आतंकवाद का गढ़ बना, रक्त-सने रणक्षेत्र में तब्दील हो गया।" (कथा सतीसर पृष्ठ- v11) कश्मीर में होती हिंसा के कारण केवल कश्मीरियों का जीवन ही खतरें में नहीं था बल्कि उनकी शिक्षा, रोज़गार के साथ ही सामान्य एवं भय-मुक्त जीवन जीने की उनकी इच्छा पर भी संकट था।

'एक कोई था कहीं नहीं-सा' उपन्यास के हबीब मोहम्मद के बच्चे हिंसा, कर्फ्यू और हड़तालों के कारण स्कूल नहीं जा पाते क्योंकि स्कूल अधिकतर बंद रहते या ऐसा माहौल बना रहता कि वह अपने बच्चों को बाहर भेजने से डरता था। उसे यह चिंता थी कि शिक्षा और रोज़गार के अभाव में बच्चों को दहशतगर्द पैसे या नौकरी की लालच देकर आतंकी बनाते हैं। हबीब मोहम्मद की यह चिंता निराधार नहीं थी। 'नरमेध' उपन्यास का रहमत नौकरी की उम्मीद में जिनके साथ जाता है वे उसके हाथ में बंदूक थमा देते हैं और वहीं से उसके घर लौटने के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं। कश्मीरी पंडितों को मिलनेवाली धमकियों, उनके खिलाफ लगनेवाले नारों और पोस्टरों ने उनके लिए भय का ऐसा माहौल बना दिया था जिसकी वजह से 'दर्दपुर' उपन्यास की सुधा एवं उसकी तरह कई कश्मीरी पंडित हर पल इसी भय में जीने को मजबूर थे कि किसी दिन कुछ लोग आएँगे और उनके परिवार को गोली मारकर चले जाएंगे और इस भय का परिणाम था विस्थापन।

v) **विस्थापन-** जब कोई जबरन अपनी भूमि से विस्थापित होता है तो उसके पीछे केवल ईंट-सीमेंट के ढांचे, कुछ सामान, कुछ ज़मीने ही नहीं छूटती बल्कि उसकी पहचान, सम्मान और अधिकार भी छीन जाता है। कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों में कश्मीरी पंडितों के विस्थापन के साथ-साथ अन्य जातियों (गैर मुसलमान) के विस्थापन को भी चित्रित गया है। शबरी (एक कोई था कहीं नहीं-सा), लल्ली (कथा सतीसर), निरंजन रैना (शिगाफ़), सुधा की माँ (दर्दपुर) आदि जब कश्मीर से विस्थापित हुए तो उन्हें यह उम्मीद थी कि वे एक दिन वापस अपने घर पूरे सम्मान से लौटकर आएँगे लेकिन उनकी यह उम्मीद कभी पूरी नहीं हो पाती और वे कश्मीरी पंडित जो घर लौटने की उम्मीद लिए कैम्प में गये थे उनकी स्थिति और भी दयनीय थी। 'कथा सतीसर' उपन्यास में राशन की लाइन में खड़ा विस्थापित संसारचंद स्वयं को हर दिन अपमानित महसूस करता है क्योंकि उसे राशन भी भीख की तरह दी जाती

है। वहीं शुभावती का मानना है कि कैम्प में हर रोज़ अपमानित होने और नर्क-सा जीवन से अच्छा है वे अपने घर यानी कश्मीर में ही मर जाए क्योंकि उसके लिए मौत इस जीवन की यातना से बेहतर विकल्प है।

चयनित उपन्यासों में यह दिखाया गया है कि किस तरह उन कश्मीरी मुसलमानों को भी अपना घर छोड़ना पड़ा था जिन्होंने हिंसा का विरोध किया था अथवा सभी के लिए एक बेहतर जीवन की उम्मीद की थी। 'शिगाफ़' उपन्यास की नसीम हिंसा के माहौल में अपने बच्चे को बड़ा नहीं करना चाहती अत: अपने बेटे के बेहतर भविष्य के लिए उसे कश्मीर छोड़ना पड़ता है वहीं दूसरी ओर 'नौशीन' उपन्यास का इम्तियाज़ भी कश्मीर छोड़कर जाने को मजबूर होता है। अपना घर छोड़ना आसान नहीं होता, विशेषकर तब जब व्यक्ति को जबरन घर छोड़ने के लिए मजबूर किया जाए या ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी जाए कि उसके पास और कोई विकल्प ही न बचें। इस उपअध्याय में हिंसा और आतंक के कारण विस्थापन के लिए उत्पन्न की गई परिस्थितियों का, कारणों का एवं उसके प्रभाव का विश्लेषण किया गया है।

vi) **कश्मीरी महिलाओं की स्थिति**- दंगा, क़बायली हमला एवं युद्ध जैसी सामूहिक हिंसा के दौरान स्त्रियाँ सबसे आसान शिकार होती हैं। अगर कश्मीरी स्त्रियों की बात करें तो उन्होंने दूहरा नहीं बल्कि तिहरा शोषण झेला था- एक कश्मीरी होने के नाते, दूसरा कश्मीरी स्त्री होने के नाते यौन हिंसा और तीसरा स्त्री होने के नाते परंपरागत एवं रूढ़िगत मान्यताओं का।

'कथा सतीसर' उपन्यास की तुलसी और 'ऐलान गली ज़िन्दा है' उपन्यास की शुभी क़बायलियों का शिकार बनने के बाद समाज के लिए अछूत बन जाती है, लगभग यही स्थिति दहशतगर्दों की शिकार स्त्रियों की भी थी। 'दर्दपुर' उपन्यास की नीरा सुधा को बताती है कि उसकी बहन की शादी केवल इसीलिये टूट जाती है क्योंकि लड़केवालों का यह मानना था कि कश्मीर में कोई स्त्री 'पाक-दामन' नहीं बची है। शारीरिक शोषण की शिकार यह स्त्रियाँ समाज के लिए ऐसी वस्तु थी जिसे न वह अलग

कर पा रहा था और न ही अपना पा रहा था। दहशतगर्दों ने केवल कश्मीरी पंडित स्त्रियों का ही शोषण नहीं किया था बल्कि कश्मीरी मुसलमान स्त्रियाँ भी उनका शिकार थी। 'सूखते चिनार' उपन्यास की रुबीना अपने ही घर में पनाह पाये आतंकियों द्वारा शारीरिक और मानसिक रूप से शोषित होती है वहीं 'शिगाफ़' उपन्यास की यास्मिन की पढ़ाई भय के कारण बंद करवा दी जाती है। इन सभी स्त्री पात्रों के माध्यम से दहशतगर्दों की उस मानसिकता को दिखाया गया है जहाँ स्त्री मात्र देह थी। जिसका शोषण धर्म की आड़ में किया था। कभी उसके धर्म के कारण उसे सज़ा देने के लिए और कभी उसके धर्म को उसका कर्तव्य बनाते हुए।

कश्मीरी स्त्रियों के सामने स्वयं को केवल आतंकवाद और हिंसा से बचाने की ही चुनौती नहीं थी बल्कि उन्हें पितृसत्तात्मक सोच से भी जूझना और लड़ना था। इन उपन्यासों में स्त्री शिक्षा का विरोध (कथा सतीसर उपन्यास की कात्या), स्त्री की पहचान को स्वीकार न करना (कथा सतीसर उपन्यास की सोना), दहेज़ प्रथा (यहाँ वितस्ता बहती है), अनमेल विवाह (एक कोई था कहीं नहीं-सा की शबरी) जैसी समस्यायों का केवल चित्रण ही नहीं किया गया है बल्कि स्त्री पात्रों के माध्यम से उस संघर्ष को दिखाया गया है जहाँ वे विरोध करती है- पुरुषों की राजनीति में स्वयं को मोहरा बनाने का, देह के आधार पर पवित्रता-अपवित्रता तय करने का और उस मानसिकता का जो उन्हें केवल 'देह' समझती है और बनाये रखना चाहती है। इस उपअध्याय में इसी आधार पर उपन्यासों में दिखाई गई कश्मीरी स्त्री की पीड़ा के कारणों और उनके प्रतिरोध का विश्लेषण किया गया है।

vii)**आर्थिक संकट-** हिंसा, आतंक, भय, कर्फ्यू, हड़ताल, सेना का पहरा- इन सबका प्रभाव कश्मीर के आर्थिक जीवन पर भी पड़ा है। उपन्यासों में आर्थिक संकट के दो पक्ष दिखाए गए हैं। 'पाषाण युग' उपन्यास में नसीम के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस तरह दहशतगर्दों द्वारा कभी धर्म के नाम पर तो कभी आज़ादी के नाम पर के जबरदस्ती पैसे मांगे जाते हैं। ऐसे में वह कश्मीरी जो मुश्किल से अपना घर चला रहा हो वह भी दहशतगर्दों को पैसे देने के लिए मजबूर है, जिसका कारण है भय और कश्मीर में उत्पन्न इसी का प्रभाव 'पर्यटन व्यवसाय' पर भी पड़ा था। उपन्यासों में यह चित्रित है कि वे

कश्मीरी जिनका आर्थिक आधार केवल पर्यटन ही था वे टूरिस्टों' की घटती संख्या से सबसे अधिक परेशान थे। 'नौशीन' उपन्यास में फरहाद का परिवार के दिन पर्यटकों के इंतज़ार में ही गुजरते थे क्योंकि वही एकमात्र उनका आधार था। वहीं 'कथा सतीसर' उपन्यास के अयूबा की ख़ुशी सिर्फ इतनी है कि "ज्यादा बर्फ, यानी..ज्यादा टूरिस्ट, यानी ज्यादा आमदनी। यानी गरम-गरम भात और टुकड़ा भर गोश्त भी।" (कथा सतीसर, पृष्ठ 397) कश्मीर में कर्फ्यू, हिंसा और सेना-दहशतगर्दों के बीच होते मुठभेड़ों ने केवल 'पर्यटन-व्यवसाय' को ही नहीं बल्कि जैसा 'शिगाफ़' उपन्यास में चित्रित है वहाँ के कामगारों, व्यापारियों एवं दुकानदारों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया था। 'ऐलान गली ज़िन्दा है' उपन्यास में आर्थिक संकट का दूसरा पक्ष भी दिखाया गया है। जहाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी युवक रोज़गार के लिए भटक रहे थे क्योंकि कश्मीर में 'फ्री एजुकेशन' के कारण शिक्षितों की संख्या तो बढ़ गई लेकिन उस अनुपात में रोज़गार नहीं है। इस उपअध्याय में इन्हीं आर्थिक अभाव से जूझते कश्मीरियों की स्थिति का विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय 'कश्मीर: वर्तमान और भविष्य' के अंतर्गत दो उपअध्याय हैं-

i) कश्मीर आज और कल: कश्मीर केन्द्रित उपन्यास

ii) कश्मीर समस्या का समाधान: कश्मीर केन्द्रित उपन्यास

पहले उपअध्याय 'कश्मीर आज और कल: कश्मीर केन्द्रित उपन्यास' में उपन्यासों को आधार बनाकर वर्तमान में कश्मीरियों के बदलते संबंधों, एक दूसरे के प्रति उत्पन्न होते संदेह और बदलते व्यवहार, भविष्य के प्रति चिंता और सब ठीक होने की बची उम्मीद का विश्लेषण किया गया है। 'कथा सतीसर' उपन्यास में यह चित्रित गया है कि कश्मीरी पंडितों के विस्थापन के बाद किस तरह रसूल अहमद और केशवनाथ के परिवार के बीच वर्षों के आत्मीय संबंध में दरार आ जाती है। जिसका कारण था- घर। वह घर जिसे केशवनाथ का परिवार कश्मीर में छोड़ आया था और रसूल अहमद उसे पाना चाहता था क्योंकि उसके अनुसार कश्मीरियों की संपत्ति पर अब कश्मीरी मुसलमानों का ही अधिकार था। संबंधों में होता यह बदलाव अब संदेह के कारण बनने लगा था

जिसके कारण 'पाषाण युग' उपन्यास की नसीम और अंजलि एक दूसरे के मोहल्ले में जाने से डरने लगी थी और स्थिति यह हो गई थी कि कश्मीरी कहीं भी खुद को सुरक्षित महसूस नहीं कर पा रहे थे। अगर वह मुसलमान है लेकिन भारत सरकार की नौकरी करता है तो 'इकबाल' उपन्यास के रईस की तरह आतंकियों द्वारा गद्दार समझा जाता है यदि वह कश्मीरी पंडित है तो 'पाषाण युग' उपन्यास के बृजमोहन जी की तरह हर पल मौत के साए में जीता है, शरणार्थी है तो कैम्पों में उपेक्षित जीवन जीता है।

चयनित उपन्यासों में भविष्य को लेकर चिंता और सब ठीक होने की उम्मीद के बीच एक अंतर्द्वंद दिखाई देता है। एक ओर जहाँ उपन्यासों में भविष्य को लेकर कई प्रश्न उठाये गए हैं, जैसे यदि सब ठीक नहीं हुआ तो आगे आनेवाली पीढ़ियों का क्या होगा? (एक कोई था कहीं नहीं-सा), क्या कश्मीर में कभी सबकुछ सामान्य हो पाएगा? (कथा सतीसर), क्या कश्मीरियों को वह जीवन मिल पाएगा जो उनका अधिकार है? (नौशीन) साथ ही रागिनी (पाषाण युग) तथा प्रेम (कथा सतीसर) जैसे पात्रों के द्वारा सब ठीक होने की उम्मीद भी दिखाई देती है। उपन्यासों में चित्रित यह अंतर्द्वंद कश्मीरियों की उस मनोदशा को दिखाता है जहाँ वे वर्तमान स्थिति की भयावहता और बेहतर आकांक्षित जीवन की चाह के बीच पीस रहे हैं।

दूसरे उपअध्याय 'कश्मीर समस्या का समाधान: कश्मीर केन्द्रित उपन्यास' में यह खोजने का प्रयास किया गया है कि चयनित उपन्यास कश्मीर-समस्या का कोई समाधान प्रस्तुत करते हैं या नहीं। हालाँकि जैसा उपन्यासों में चित्रित है कि कश्मीर की समस्या बहुत जटिल है और इसका समाधान आसान नहीं है क्योंकि यह कोई एक समस्या या एक दिन की समस्या नहीं है। इसमें धर्म, राजनीति और बाहरी देश भी शामिल है लेकिन जब समस्या पर बात होती है तो समाधान की संभावनाएं भी बनती है। यदि कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों की बात करें तो उपन्यासों में कश्मीर-समस्या और उसके कारणों को तो विस्तार से दिखाया गया है लेकिन इन उपन्यासों में ऐसा कोई भी समाधान सामने नहीं आता जो लागू न किया गया हो अथवा बहुत अधिक व्यवहारिक हो। 'इकबाल' उपन्यास में इस

समस्या का समाधान न होने का कारण सही समय पर उसके लिए प्रयास नहीं करना बताया गया है, जिसने इस समस्या को और अधिक जटिल बना दिया। वहीं मधु कांकरिया के उपन्यास 'सूखते चिनार' का संदीप यह मानता है कि "पृथ्वी से आप भूख मिटा दीजिए, तो न कश्मीर में आतंकवाद पनपेगा.." (सूखते चिनार, पृष्ठ 86) लेकिन कश्मीर के पनपे आतंकवाद का कारण सिर्फ भूख नहीं है बल्कि और भी कई कारण हैं जिन्हें 'कथा सतीसर' उपन्यास में उठाया गया है, जैसे सही समय पर निर्णय न लेना, राजनैतिक स्वार्थ आदि। इस उपअध्याय में चयनित उपन्यासों में कश्मीर समस्या के दिए गए समाधानों का विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय- कश्मीर केन्द्रित उपन्यास: शिल्प विधान- कोई भी रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से जो कहना चाहता है वह उसके रचना की विषय-वस्तु होती है और जिस तरीके से कहता है वह उसकी रचना का शिल्प है। कथ्य के साथ-साथ शिल्पगत नवीनता और मौलिकता किसी भी उपन्यास को एक अलग पहचान देती है। कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों की भाषा में कश्मीरी भाषा(कोशूर) के शब्द, वहाँ की लोककथाएं (कथा सतीसर), लोकगीतों (एक कोई था कहीं नहीं-सा) का प्रयोग तो हुआ ही है साथ ही शैली में भी नवीनता है। इन उपन्यासों में ब्लॉग (शिगाफ़), फेसबुक चैट, मैसेज (इकबाल) शैलियों का भी प्रयोग किया गया है। इस अध्याय में यह देखने का प्रयास किया गया है कि 'कश्मीर-समस्या' की अभिव्यक्ति के लिए रचनाकारों ने कैसी भाषा एवं शैली को माध्यम बनाया है।

छठवां अध्याय- कश्मीर विमर्श: एक तुलनात्मक अध्ययन- यह अध्याय चयनित उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है। चयनित उपन्यासों के रचनाकार कश्मीरी जैसे- चंद्रकांता, क्षमा कौल, मीरा कांत, संजना कौल एवं हरिकृष्ण कौल और गैर कश्मीरी जैसे- मनमोहन सहगल, पद्मा सचदेव, शत्रुघन प्रसाद, मनीषा कुलश्रेष्ठ, मधु कांकरिया एवं जयश्री राय दोनों हैं। इस अध्याय में कश्मीरी और गैर कश्मीरी रचनाकारों की दृष्टि, विवेचित विषय एवं लेखन शैली अथवा प्रस्तुति का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। गैर कश्मीरी रचनाकारों ने जहाँ आतंकवाद, सेना, कश्मीरी स्त्री की

स्थिति और विस्थापन का अधिक चित्रण किया है वहीं कश्मीरी रचनाकारों ने इन सबके साथ ही साझी संस्कृति, सामाजिक-सांस्कृतिक अलगाव, धार्मिक टकराव और आर्थिक संकट का विस्तृत चित्रण किया है। चूँकि 'कश्मीर समस्या' ने किसी एक धर्म, वर्ग या लिंग को ही नहीं बल्कि एक बड़े समुदाय को प्रभावित किया था इसलिए इस अध्याय में यह देखने का प्रयास किया गया है एक ही समस्या को अलग-अलग उपन्यासकारों ने किस रूप में चित्रित किया है।

निष्कर्ष- इस शोधकार्य में 'कश्मीर-समस्या' का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव और हिंदी उपन्यासों में उसके चित्रण को तार्किक ढंग से विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों में दर्ज 'कश्मीर-समस्या' के विविध पहलुओं पर विचार किया गया है और 'खुबसूरत वादियों के बीच बदसूरत होते कश्मीर' को अतीत, वर्तमान और भविष्य के परिप्रेक्ष में प्रस्तुत किया गया है क्योंकि कश्मीर की राजनैतिक पृष्ठभूमि और 'साझी संस्कृति' को समझे बिना उपन्यासों में दिखाई गई कश्मीरी-जीवन समस्या और उसके कारणों को नहीं समझा जा सकता है।

प्रस्तुत शोध में चयनित उपन्यासों के अध्ययन के अतिरिक्त उपन्यासों के रचनाकारों- चंद्रकांता, मीरा कांत, क्षमा कौल, मधु कांकरिया, मनमोहन सहगल, जयश्री राय एवं मनीषा कुलश्रेष्ठ से बातचीत की गई है और उनका साक्षात्कार भी लिया है। इस शोधकार्य की यह सीमा रही है कि किसी भी कश्मीरी मुसलमान द्वारा लिखित कोई हिंदी उपन्यास नहीं मिल पाया है। इस शोधकार्य को एकपक्षीय होने से बचाने के लिए जहाँ तक संभव हो सका है कश्मीर में रह रहे लेखकों जैसे- निदा नवाज़, वहाँ काम करने वाले कामगारों, शोधार्थियों एवं अन्य लोगों से भी बातचीत की गई है। इसके साथ ही कश्मीरी मुसलमान लेखकों की रचनाओं- डायरी (सिसकियाँ लेता स्वर्ग), कहानियों (घाव चिन्ह-हिंदी अनुवाद) एवं आलेखों, के माध्यम से कश्मीरी मुसलमानों के पक्ष को भी समझने का प्रयास किया है। साथ ही 'A Long Dream of Home' पुस्तक जो कश्मीरियों के अनुभवों को समझने में सहायक है का भी अध्ययन किया और उन कश्मीरी पंडितों के साक्षात्कारों का भी अध्ययन किया गया है जो

1980 के बाद कश्मीर छोड़कर नहीं गए थे। साथ ही 'महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा' द्वारा आयोजित 'जम्मू कश्मीर का सांस्कृतिक अवबोध: भाषा एवं साहित्य का परिप्रेक्ष' (ई कार्यशाला) के माध्यम से भी इस विषय को समझने में सहायता मिली है।

आधार ग्रन्थ-

1. ऐलान गली जिंदा है- चंद्रकांता, राजकमल प्रकाशन, 1984
2. नरमेध- मनमोहन सहगल, वाणी प्रकाशन, 1986
3. पाषाण युग- संजना कौल, आधार प्रकाशन, 1988
4. यहाँ वितस्ता बहती है- चंद्रकांता, वाणी प्रकाशन, 1992
5. नौशीन- पद्मा सचदेव, किताबघर प्रकाशन, 1995
6. घटता-बढ़ता चाँद- मनमोहन सहगल, पंचशील प्रकाशन, 1998
7. कथा सतीसर- चंद्रकांता, राजकमल प्रकाशन, 2001
8. कश्मीर के बेटी- शत्रुघ्न प्रसाद, सत्यसाहित्य प्रकाशन, 2002
9. दर्दपुर- क्षमा कौल, भारतीय ज्ञानपीठ, 2004
10. व्यथ-व्यथा- हरिकृष्ण कौल, श्री नटराज प्रकाशन, 2005
11. एक कोई था कहीं नहीं-सा- मीरा कांत, वाणी प्रकाशन, 2009
12. शिगाफ़- मनीषा कुलश्रेष्ठ, राजकमल प्रकाशन, 2010
13. सूखते चिनार- मधु कांकरिया, भारतीय ज्ञानपीठ, 2012
14. इकबाल- जयश्री राय, आधार प्रकाशन, 2014

सहायक ग्रन्थ -

1. पत्थर अलपत्थर- उपेन्द्रनाथ अश्क- नीलाभ प्रकाशन, 1957
2. कश्मीर की धरती- क्षेमलता वखलू- अजय पब्लिशर्स, 1969

3. कश्मीर की कसक- मनमोहन सहगल- सन्मार्ग प्रकाशन, 1974
4. काँपता हुआ दरिया- मोहन राकेश और मीरा कांत- राधाकृष्ण प्रकाशन, 2020
5. काली बर्फ- चंद्रकांता- किताबघर प्रकाशन, 1996
6. कथानगर- चंद्रकांता- अमन प्रकाशन, 2018
7. अब्बू ने कहा था- चंद्रकांता- भारतीय ज्ञानपीठ, 2005
8. चंद्रकांता की यादगार कहानियाँ- संपादक. तेजपाल सिंह धामा- हिंदी पाकेट बुक्स, 2010
9. चंद्रकांता: चुनी हुई कहानियाँ- अमन प्रकाशन, 2015
10. कागज़ी बुर्ज़- मीरा कांत- भारतीय ज्ञानपीठ, 2010
11. काठ की मछलियाँ- संजना कौल- यूनीस्टार बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, 2008
12. युद्ध और बुद्ध- मधु कांकरिया- भारतीय ज्ञानपीठ, 2022

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. साहित्य में नारी चेतना- संपादक. उदयन मिश्र, दयानिधि मिश्र, उदय प्रकाश-वाणी प्रकाशन, 2017
2. 21. वीं शती का हिंदी उपन्यास- पुष्पपाल सिंह- राजकमल प्रकाशन, 2016
3. कश्मीरी समाज: विस्थापन और समस्याएं(शिगाफ उपन्यास के सन्दर्भ में)-जयश्री पवार- चिंतन प्रकाशन, 2018
4. ललद्यद- जयालाल कौल, अनुवाद. शिबन कृष्ण रैना- साहित्य अकादमी, 1980
5. ललद्यद- शिबन कृष्ण रैना- भुवन वाणी ट्रस्ट, 1977
6. ललद्यद मेरी दृष्टि में- बिमला रैना- एन. पी. सर्च, 2007
7. कश्मीरी कवयित्रियाँ और उनका रचना संसार- डॉ. शिबन कृष्ण रैना- हिंदी बुक सेंटर, 1993
8. कश्मीरी साहित्य का इतिहास- शशिशेखर तोषखानी- जे एंड के. अकैडमी ऑफ़ आर्ट, कल्चर एंड लैंग्वेजिज़, 1985

9. कश्मीरी भाषा और साहित्य- डॉ. शिबन कृष्णा रैना- सन्मार्ग प्रकाशन

10.कश्मीर: संस्कृति और साहित्य के परिवेश में- काशीनाथ दर- सीमांत प्रकाशन, 1988

11. हब्बा खातून और अरणिमाल के गीत-गान- अनुवाद. सुरेश सलिल, मधु शर्मा- वाणी प्रकाशन, 2015

12. कहा था ऋषि ने- शशि शेखर तोशखानी- जे एंड के. अकैडमी ऑफ़ आर्ट, कल्चर एंड लैंग्वेजिज़, 1975

13. नुन्द ऋषि- संपादक. रतनलाल शांत, जम्मू कश्मीर कला संस्कृति तथा भाषा अकेडेमी- 1979

14.कश्मीर: साहित्यिक संदर्भ- रतनलाल शांत- निहार प्रकाशन, 2000

15. कश्मीरनामा- अशोक कुमार पाण्डेय- राजपाल एंड सन्ज़, 2018

16. कश्मीर और कश्मीरी पंडित- अशोक कुमार पाण्डेय- राजकमल प्रकाशन, 2020

17. कश्मीर समस्या- सं. कृष्णानन्द शुक्ल- राधा पब्लिकेशन्स, 2010

18. खोया हुआ कश्मीर- विजय गुप्त- अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर, 2008

19. कश्मीर समस्या: एक विवेचनात्मक अध्ययन- डॉ. मानिक लाल गुप्त- एटलांटिक प्रकाशन, 2017

20. कश्मीर समस्या और पृष्ठभूमि- गोपीनाथ श्रीवास्तव- राजपाल एंड सन्ज़, 1969

21. हिंदी साहित्य ज्ञानकोष- वाणी प्रकाशन- 2019

22. भारतीय उपन्यास की दिशाएँ- सत्यकाम, सामयिक प्रकाशन- 2012

23. भारतीय साहित्य- डॉ. लक्ष्मीकांत पाण्डेय, डॉ. प्रमिला अवस्थी- आशीष प्रकाशन, 2004

24.हिंदी उपन्यास का इतिहास- गोपाल राय, राजकमल प्रकाशन- 2016

25. भारतेंदु समग्र- संपादक- हेमेन्द्र शर्मा, प्रचारक ग्रंथावली परियोजना- 1987

26. आलोचना का स्त्री पक्ष: पद्धति, परंपरा और पाठ- सुजाता- राजकमल प्रकाशन, 2021

27. भारतीय साहित्य की पहचान- संपादक- डॉ. सियाराम तिवारी- वाणी प्रकाशन, 2015

28. हिंदी का गद्य साहित्य- डॉ. रामचंद्र तिवारी- विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2014

29. भारतीय संस्कृति और हिंदी प्रदेश 2- रामविलास शर्मा- किताबघर प्रकाशन, 2018

30. घाव चिन्ह- अनुवाद- डॉ. निदा नवाज़- जे एंड के. अकैडमी ऑफ़ आर्ट, कल्चर एंड लैंग्वेजिज़, 2018

31. सिसकियाँ लेता स्वर्ग- डॉ. निदा नवाज़- अंतिका प्रकाशन, 2015

32. हब्बा खातून- श्यामलाल साधू- भारतीय साहित्य के निर्माता, 2019

33. हिंदी उपन्यास समय से संवाद- रोहिणी अग्रवाल- आधार प्रकाशन, 2016

34. कश्मीर इतिहास और संस्कृति- कुसुम भूरिया दत्ता, ऋषन् भारद्वाज 'ऋषभ' प्रतिभा प्रकाशन, 2008

35. कश्मीर इतिहास और परंपरा- कुमार निर्मलेंदु- लोकभारती प्रकाशन, 2022

36. मेरे भोजपत्र- चंद्रकांता- अरु पब्लिकेशन्स, 2008

37. समकालीन जम्मू-कश्मीर का साहित्य गति-प्रगति- संपादक- अग्निशेखर, मोहन सिंह- साहित्य भण्डार, 2016

38. वितस्ता के वातायन सम्पादक, सम्पादक. डा. रमेशकुमार शर्मा, प्रेम प्रिंटिंग प्रेस, 1981

39. काश्मीर: देश व संस्कृति- शिवदान सिंह चौहान, राजकमल प्रकाशन, 1950

40. लल वाख, अनुवाद. शम्भु नाथ भट्ट 'हलीम '- सेंटर आफ कश्मीरी लैंगवेज लिटरेचर एंड क्लचर, 2016

41. साहित्य का स्त्री-स्वर- रोहिणी अग्रवाल, साहित्य भण्डार, 2016

42. कथा विचार- ज्योतिष जोशी- विजया बुक्स, 2019

43. Kashmir Behind the White Curtain 1972-1991, Konark Publishers, 1992

44. Article 370: A Constitutional History of Jammu and Kashmir- A. G.

Noorani, Oxford Scholarship Online, September 2012

45. Hindu Rulers, Muslim Subjects- Mridu Rai, Permanent Black Publication, 2007

46. Culture and Political History of Kashmir- P.N.K Bamzai, Volume 3, M.D Publications Pvt Ltd, 1994

47. Danger in Kashmir- Josef Korbel, Princeton University Press, 1954

48. Kashmir Towards Insurgency- Balraj Puri- Orient BlackSwan, 1993

49. Looking Back- Mehar Chand Mahajan, Asia Publishing House

50. Mission With Mountbatten- Alan Campbell Johnson, Aico Publishing House, 1951

51. A Long Dream of home- Edited by Siddhartha Gigoo, Varad Sharma- Bloomsbury India, 2015